पंद्रहवाँ अध्याय

अलौकिक शिक्षा-पद्धति

श्री साईनाथ सर्वज्ञ परमेश्वर के ही अवतार थे। दूर रहने वाले अपने भक्तों की ओर तो उनका ध्यान होता ही था। पर आखिर प्राणिमात्र की सूक्ष्मतम गतिविधि से भी वे पूर्णत: परिचित रहते थे; यह बात दो छिपकलियों की कहानी से भली-भाँति सिद्ध हो जाती है। एक दिन जब श्री साई महाराज द्वारकामाई में बैठे थे, सामने की दीवार पर खुशी से नाचकर एक छिपकली ने चुकचुक आवाज निकाली। वहाँ बैठे हुए एक भक्त के मन में यह विचार आया कि छिपकली का इस प्रकार आवाज करना क्या अपशकुन है ? उसने श्री बाबा से यह विचित्र प्रश्न किया-''बाबा, यह छिपकली क्या कहना चाहती है ?''

श्री बाबा ने उत्तर दिया,''अरे भाई, औरंगाबाद से इसकी बहन इससे मिलने आ रही है। इसलिये यह छिपकली आनंद-विभोर होकर नाच रही है।'' प्रश्न पूछने वाला भक्त यह उत्तर सुनकर स्तब्ध मौन बैठा रह गया। थोडी ही देर बाद घोडे पर सवार होकर एक मनुष्य औरंगाबाद से शिरडी पहूँचा। अपने थके हुए घोडे को चने खिलाने के लिए चनों से भरा हुआ एक बोरा उस यात्री ने निकाला और जमीन पर जोर से झटक दिया। इतने में ही उस बंद थैले में से एक छिपकली बाहर निकली और सब लोगों की आँखों के सामने नाचती-फुदकती हुई द्वारकामाई की दीवार पर चढी और सचमुच ही उसने अपनी बहन से भेट की। दोनो बहनों ने प्रसन्नतापूर्वक एक दूसरे से भेंट की और खुशी से वे इधर-उधर दौडने लगी। वह नयनाभिराम दृश्य देखकर सभी उपस्थित लोगों के हृदय भर आये और श्री साई की अद्भूत लिलाओं और उनकी सर्वज्ञता पर उन्होंने आश्चर्य किया।

श्री साई महाराज को कल्पतरू, कामधेनू या चिन्तामणी की उपमा देना सर्वथा अनुचित होगा; क्योंकि सद्गुरू की योग्यता तो इन सभी से अधिक मूल्यवान होती है। कल्पवृक्ष, हम जिस वस्तु की कल्पना करेंगे वही वस्तु दिला देता है। चिंतामणी भी हम जिस वस्तु का चिन्तन करेंगे वही प्राप्त करा देगी। परंतु श्री साई जैसे उच्च कोटि के सद्गुरू तो भक्तों को अतर्क्य, गूढ सत्य स्थिती का दर्शन कराते है। प्रत्यक्ष ब्रम्हज्ञान से परिचित कराने का दिव्य सामर्थ्य उनमें होता है। केवल भक्त के पास ग्रहण करने की शक्ति होनी चाहिये। ब्रम्हज्ञान के सम्बन्ध में निरर्थक गप्पे लडाना तो सभी जानते है।

ऐसे ही एक दिन एक धनवान गृहस्थ श्री साई महाराज के पास पहूँचा और ब्रम्ह-ज्ञान प्राप्त करने का हठ पकडकर बैठ गया। श्री साई महाराज ने उससे कहा-''मैं प्रत्यक्ष ब्रम्ह ही तुम्हें दिखाता हूँ''और उसे अपने निकट बैठा लिया। कुछ देन इधर- उधर की बाते करने के पश्चात् जब श्री बाबा ने देखा कि उस धनी मनुष्य को अपने प्रश्न को विस्मरण हो चुका है तो उन्होने एक लडके को अपने पास बुलाया और उससे कहा कि नन्दु मारवाडी से पाँच रूपये उधार ले आओ। थोडी ही देर बाद लडके ने लौट कर कहा कि नन्दु मारवाडी घर पर नही मिला। श्री बाबा ने अब उसे बाला नामक बनिये के पास भेज दिया। वहाँ से भी लडका खाली हाथ वापिस आया। श्री बाबा ने पाँच रूपयों के लिए उसे अन्य चार-पाँच स्थानों पर भेज दिया। पर कहीं भी रूपये नहीं मिले।

श्री साई महाराज तो स्वयं ही मूर्तिमंत ब्रम्ह थे। पाँच रूपये उधार लेने का उन्होंने एक नाटक रचाया था। सामने बैठे हुए उस धनी गृहस्थ की जेब में उस क्षण पर्याप्त धन था। फिर भी श्री बाबा को केवल पाँच रूपये उधार देने की भी उसकी इच्छा न हुई। पाँच रूपये जैसी अत्यन्त अल्प रक्कम के मोह को भी वह न त्याग सका और संसार में अत्यन्त बहुमूल्य समझे जाने वाले ब्रम्ह-ज्ञान को प्राप्त करने का दुराग्रह मन में लेकर वह वहाँ

बैठा था। कुछ देर बाद जब वह बैठे-बैठे तंग आ गया तो उस धनी ने श्री बाबा से कहा-''बाबा, मुझे जाने के लिए देर हो रही है। आप मुझे ब्रम्ह दिखा रहे है न?'' तब श्री बाबा ने उत्तर दिया-''अरे मुर्ख, मैने अभी तक जो दौड-धूप की, वह क्या व्यर्थ हो गई। ब्रम्ह ज्ञान प्राप्त करने के लिए पाँच प्रमुख वस्तुओं का त्याग करना आवश्यक है। अपने पंचप्राण, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, तथा देहाभिमान। इन सबका त्याग किय बिना ब्रम्ह-ज्ञान का मार्ग ढूँढना व्यर्थ है। तुझ जैसा मनुष्य पाँच रूपये का मोह छोड नहीं सकता और ब्रम्ह-ज्ञान की बातें करता है? ब्रम्हज्ञान का मार्ग तलवार की धार पर चलने की भाँति बिकट है। एक ही जन्म मे मनुष्य के लिए ब्रम्ह-ज्ञान प्राप्त करना बिल्कुल असंभव है। मुमुक्षु भक्त के अंत:करण में जब पूर्ण विरक्ति उत्पन्न होती है और वह अंतर्मूख हो जाता है, तभी उसे धीरे-धीरे ब्रम्ह-ज्ञान की उपलब्धि होती है। जब अपने पास इसी क्षण पाँच रूपये की पचास गुनी पर्याप्त धन राशी होने पर भी तुम पाँच रूपये की जैसी क्षुद्र रकम का मोह दूर न कर सके तो फिर व्यर्थ की बातें क्यों करते हो? तुम्हारे पास इस समय दक्षिणा देने के लिए कितने रूपये है, बताओ?'' उस धनी व्यक्ति ने लज्जित हो तुरन्त ही अपना बटुआ निकाला और उस में जितने रूपये थे, वे सब बाबा के चरणों में डाल दिये। चमत्कार यह हुआ कि ठीक-ठीक दो सौ पचास रूपये दस-दस रूपये के पच्चीस नोटों के रूप में थे।

श्री साई महाराज की शिक्षा पद्धति इस प्रकार विचित्र ढंग की होती थी। अन्य साधुओं के सदृश वे घोर अरण्यों में, पहाडो की गुफाओं में या एकांत वास में बैठ ध्यान-धारणा नही करते थे, वरन् प्रपंच मे फँसे हुए सभी प्रकार के लोगों के संपर्क मे रहते थे। उनका मार्ग दर्शन करते थे। नित्य व्यापार सहज भाव से निभाने के साथ-साथ श्री साई का शुद्धिकरण तथा आत्मिक उन्नति का कार्य चालू रहता था।

संसार में मग्न रहकर भी परमार्थ कैसे साधा जा सकता है और

नित्य के व्यवहार में भक्तों को किस प्रकार का आचरण रखना चाहिए, इस सम्बन्ध में श्री बाबा ने 'श्री साई सच्चरित्र' के लेखक हेमाडपंत के समक्ष सुन्दर विवेचन किया था। श्री बाबा ने कहा था, ''कोई भी व्यक्ति पूर्व जन्मो के कार्य-कारण सम्बन्ध के बिना किसी दूसरे व्यक्ति की ओर आकर्षित नही होता। इसलिये यदि आपके निकट कोई व्यक्ति या प्राणी संयोगवश आ पहूँचा तो उसे दुष्ट बुद्धि से प्रेरित होकर दूर से ही न लौटाए। अत्यन्त प्रेम से उसे अपनाइये और उससे उचित बर्ताव कीजिये। तृषितों को जल दीजिये, भूखे अतिथि को अन्न दीजिये, गरीब दीन-दु:खियों को शरीर ढकने के लिए अपने पास का वस्त्र अर्पण कीजिए और कोई निराश्रित घर पर आए तो उस आश्रय दीजिये। भूतदया की इतनी सारी सुलभ तथा सरल बात यदि आपके नित्य आचरण में समा गई तो प्रत्यक्ष श्री हरि को भी आपकी पुकार सुनते ही दौडकर आना पडेगा। यदि आपकी इच्छा दान-धर्म करने की नही है या आपका सामर्थ्य नही है तो भी शांत होकर बैठिए, कुछ न बोलिए, उस झिडकियाँ न दिजीये। उसके दीन-दूर्बल हृदय पर आघात न किजिये। यदि कोई आपकी निंदा या बुराई करता हो तो आप भी गालियों की बौछार कर अपनी अवनति होने दिजिये। केवल मन को शान्त रखते हुए परमेश्वर भक्ति में ही ध्यान रखिये। मेरे और आपके बीच जो आध्यात्मिक अंतर है, वह सतत मनन और अध्ययन के द्वारा दूर करने का प्रयत्न कीजिये। ऐसा करने से आपको यह अनुभव होगा कि आपका आध्यात्मिक स्तर धीरे-धीरे ऊँचा होता जा रहा है। परमेश्वर सभी की रक्षा करता है। श्रीकृष्ण ने जैसे गीता मे कहा है, उस दयाधन परमेश्वर के सत्य स्वरूप का साक्षात्कार करने का एकमात्र सरल तथा सुलभ मार्ग भक्ति ही है। अपने प्रारब्ध के वश ही हम एक-दुसरे के निकट आये है। इसीलिए सभी के साथ शान्ति एवं प्रेम से बर्ताव करना, यही सब धर्मो का सार है। मेरी यह विनम्र प्रार्थना है की सभी भक्त लोग शान्ति का अभ्यास करें।'' श्री साई महाराज का यह उपदेश मनन करने योग्य है। श्री

साई के इन शब्दो में भक्तों को सभी धर्मो के महान तत्त्वो का बिल्कुल सीधा तथा सरल अर्थ निश्चित रूपसे ज्ञात होगा।

श्री साई महाराज सदैव बात इस के लिए प्रयत्नशील रहते थे कि उनके भक्तों के मन में अच्छे विचार उत्पन्न हो। हमारे ऋषि-मुनियों ने कहा है कि सोते समय सदैव अपने इष्ट देवता का चिंतन करना चाहिये। प्रात:काल उठते ही सर्वप्रथम अपने इष्ट देवता का चिंतन करना चाहिये , जिससे सारे दिन आपके मन मे शुद्ध एवं उच्च कल्पनाओं का विकास होता रहे। इस प्रकार आप अपने ज्ञान-सामर्थ्य में वृद्धि होने का भी अनुभव करेंगे। 'श्री साई सच्चरित्र' के लेखक श्री हेमाडपंत ने मन में निश्चय किया कि अगला दिन गुरूवार है, इसलिय वे दिन भर राम-नाम का जप करेंगे। दूसरे दिन प्रात:काल आँख खुलते ही उन्हें अपेन निश्चय का स्मरण हुआ। संकल्प के अनुसार राम-नाम का जप कर वे श्री बाबा के दर्शन के लिए गये। भक्ति-भाव से पूजा अर्चना समाप्त कर वे बाहर आ ही रहे थे कि उन्होंने देखा कि बुटी की हवेली के निकट औरंगाबादकर नामक श्री बाबा के एक अन्य भक्त अपनी सुरीली एवं मधुर आवाज में प्रभु श्री रामचंद्र जी से संबंधित एक भक्ति-पद गा रहे थे। एकनाथ महाराज के उस पद में गुरू कृपा से भक्तों को दिव्य दृष्टि प्राप्त होने और प्रभु रामचंद्र जी के प्रत्यक्ष दर्शन देने की दशा का बहुत ही हृदयहारी वर्णन किया गया था। ठिक उसी समय औंरगाबादकर के मन में वही पद गाणे की प्रेरणा कर श्री साई महाराजने श्री हेमाडपंत के मन में उत्पन्न अच्छी कल्पना की और भी पुष्टि की। समय या स्थान का विचार न करते हुए श्री बाबा अपनी इच्छा के अनुसार भक्तों को ऐसी विचित्र रीति से उपदेश दिया करते थे।

श्री बाबा को किसी की निंदा या बुराई करना पसंद नही था। एक बार एक भक्त ने श्री साई के निकट बैठ एक अन्य भक्त की निंदा करना आरम्भ किया। उस समय तो श्री बाबा ने उसकी बाते ध्यान से सुनी। इसके उपरांत दोपहर को लेंडी बाग से लौटते समय उसी भक्त को सामने खडा देखकर श्री

बाबा ने कीचड में मूँह गडाये बैठे एक गंदे सुअर की ओर उँगली से संकेत करते हुए कहा-''देखो, वह सुअर कैसी प्रसन्नता से गंदगी चाट रहा है। तुम्हारा आचरण भी कुछ इसी ढंग का होता है। अपने भाई की निंदा कर तुम्हें स्वर्ग का आनंद मिलता है। पूर्व जन्म के पुण्य संचय से ही तुम्हें यह मनुष्य जन्म प्राप्त हुआ है , और इस जन्म में भी ऐसे दुष्कर्म करते रहने से यह शिरडी तुम्हे कैसे लाभदायक सिद्ध हो सकती है?'' श्री बाबा के यह शब्द सुनते ही भक्त का सिर लज्जा से झुक गया। श्री बाबा की शिक्षा-पद्धति ऐसी ही विलक्षण हुआ करती थी। सहसा भक्त के हृदय पर आघात करने वाले शब्द भी बाबा कभी अपने मुख से नही निकलने देते थे। श्री बाबा का सदैव यही महान प्रयत्न रहता था की भक्त लोग अपना आचरण शुद्ध रखे। उनका यह हठ कभी न रहा कि केवल उनके ही नाम का जप किया जाय। श्रवण एवं मनन करते हुए ''मै कौन हूँ?'' इस प्रश्न का सभी भक्त लोग विचार करें, यही उनकी हार्दिक इच्छा होती थी। जिन भक्तों की उनमें अविचल श्रद्धा थी, उन्हें वे साई नाम का स्मरण करने के लिए कहा करते थे, तो कई भक्तों से अध्यात्म-रामायण, ज्ञानेश्वरी, भगवद्गीता आदि धार्मिक ग्रंथो का अध्ययन करने का आग्रह करते थे। किसी भी विशिष्ट देवी-देवता या धर्म का उन्हें विशेष आग्रह नही था। सभी देवता ओर धर्म उनके लिए समान थे। कुछ भक्तों से वे मनुष्य देह में प्रत्यक्ष भेंट कर साक्षात्कार करते थे, तो कुछ भक्तों से स्वप्न में भेट कर उन्हें सावधान किया करते थे। बडे पक्के शराबियों के स्वप्न मे प्रकट हो वे उनकी छाती पर बैठकर उन्हें बुरी तरह मारते थे और उन्हें इस विनाशकारी व्यसन से परांगमुख करने का प्रयत्न करते थे। उपासनी महाराज की भाँति जो भक्त आध्यात्मिक ज्ञान में पर्याप्त प्रगति कर चुके थे, उन्हें वे आध्यात्मिक प्रयोग बताते थे। अन्य सामान्य भक्तों को अध्यात्मिक विषयों से दूर ही रखते थे। हठ-योगियों को वे सप्रमाण बतलाते थे कि उनका मार्ग गलत है और उन्हे धर्मयुक्त समाधि अवस्था का अनुभव बता देते थे। हर एक मनुष्य को परिश्रम

करना चाहिये, और हर एक को उसके परिश्रम का फल मिलना ही चाहिए, यह उनका निश्चित मत था। एक बार श्री बाबा सीढी से वामन गोंदकर के मकान पर चढे और वहाँ से राधाकृष्णमाई के मकान की छत पर चढकर पुन: नीचे उतर आये। उतरते ही उन्होंने सीढी लाने वाले मजदूर को दो रूपये दिये। जिससे परिश्रम लिया जाता है, उसे उसका फल मिलना ही चाहिये, यह तत्व भली-भाँति बताने के लिए ही श्री बाबा ने यह लीला रचाई थी।

चमत्कार दिखाकर अत्यन्त जटिल प्रश्न भी चुटकियों मे हल कर डालना श्री बाबा का एक विशेष गुण था। दासगणुजी ने ''ईशावस्योपनिषद'' के आधार पर मराठी ओवी में एक ग्रंथ लिखना आरम्भ किया। मूल संस्कृत ग्रंथ का आकलन करने में बहुत कठिनाई होने के कारण दासगणूजी के मराठी रूपान्तर में अनेक त्रुटियाँ रह गई। उन्होंने पर्याप्त प्रयत्न किया; पर वे स्वयं अपना ही समाधान न कर सके। ''आत्म समाधान एवं सुख'' इस प्रश्न पर वे स्वयं अपना ही समाधान न कर सके। ''आत्म समाधान एवं सुख'' इस प्रश्न पर आधारित एक मंत्र का वास्तविक अर्थ समझ में नही आ सका। अन्त में उन्होंने आत्म-ज्ञान का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने वाले श्री साईनाथ के समक्ष ही अपना प्रश्न उपस्थित करने का साहस किया। श्री बाबा ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा-''चिंता का कोई कारण नही। अर्थ बिल्कुल सीधा-सादा है। विलेपार्ले जाओ। वहाँ काकासाहेब दीक्षित की सेविका तुम्हारे मन में उत्पन्न हुई शंका का निराकरण करेगी।'' इस प्रकार अटपटा-सा उत्तर सुनकर भक्त लोग यही समझे कि श्री बाबा मजाक कर रहे है। परन्तु दासगणूजी का श्री बाबा में पूर्ण विश्वास था। उन्होंने तुरन्त ही बम्बई के लिए प्रस्थान किया।

विलेपार्ले में जब दासगणूजी ध्यान-पूजा में मग्न थे, उनके कानों में किसी गीत के मंजूल, मधुर स्वर सुनाई दिये। बाहर आते ही उन्होंने देखा कि काकासाहेब की तरूण नोकरानी बर्तन माँजते-माँजते गीत गा रही है। गीत का विशेष तो था एक सुन्दर जरी की किनारी लगी हुई लाल रंग की

साडी; पर उस युवती के शरीर पर तो एक फटी-पुरानी साडी ही थी। दासगणूजी गीत सुनकर पूर्णतया मोहित हो गये थे और उन्होंने श्री मोरेश्वर प्रधान के कंह कर हाथों-हाथ एक सुन्दर-सी साडी खरीदवा कर युवती को पुरस्कार स्वरूप दे डाली। भूखे मनुष्य को अन्न मिलने से जैसा आनंद होता है। उसी प्रकार वह युवती हर्षविभोर हो उठी। दासगणूजी की दी हुई साडी पहन कर वह लगातार दो दिन घर के काम-काज के लिए आती रही। अपना कार्य समाप्त कर वह हर्षोल्लास से नाचती-उछलती हुई अन्य समवयस्क लडकियों के साथ खेलकर घर लौट जाती थी। तिसरे दिन उसने वह साडी यत्नपूर्वक बक्सेमें बंद कर रख दी और फिर वही फटी-पुरानी साडी पहनकर घर का काम-काज करने आने लगी। पर नई साडी प्राप्त होने से उसे जो हर्षोल्लास हुआ था, उसमें किसी प्रकार कोई कमी दिखाई नही दी। यह दृश्य देख कर दासगणूजी को ईशावास्योपनिषद के मन्त्र का सच्चा अर्थ ज्ञात हुआ। लडकी परिस्थिति से गरीब थी, उसके शरीर पर वही जीर्ण वस्त्र थे; किंतु केवल इस कल्पना से कि उसके पास एक बहुत ही सुन्दर जरी-बुटे वाली साडी भी है, उसका मन आनन्द से फूला नही समा रहा था। हमारे अन्त:करण में भी सुख-दु:ख की कल्पनाई इसी प्रकार के मनोंभावो पर आधारित होती है। परमेश्वर ने जिस स्थिति में रखा है, उसी में सुख मानते हुए, सन्तोष वृत्ति से जीवन बिताने का यदि मनुष्य प्रयत्न करे तो उसे आजीवन कभी दु:ख कठिनाई का सामना नही करना पडेगा। काकासाहेब की नौकरानी ने अपने सहज आचरण से दासगणूजी को उपनिषदों में वर्णित आत्मसमाधान (आत्म-वृत्ति) का वास्तविक अर्थ स्पष्ट कर दिया। श्री साई महाराज की यह लिला कैसी अतर्क्य और मन को मोहित करने वाली है।

हमारी इस भारत-भूमि में सन्तों कि एक श्रृंखला या संस्था का होना सम्भव ही है; क्योंकि भिन्न-भिन्न स्थानों में विचरते हुए ये सभी सन्त लोग एक दूसरे के सम्पर्क स्थापित कर लेते है। श्री साई महाराज के जीवन काल

में भी समय-समय पर ऐसे अनेक प्रसंग भक्त अनुभव कर चुके है ? ठाकूर नामक एक सज्जन भुमि-कर विभाग में नोकरी कर रहे थे। बेलगाँव के निकट वडगाँव में जब वे किसी कार्यवश गये तो वहाँ प्रसिद्ध कानडी सन्त श्री अप्पा महाराज से उनकी भेट हुई। अप्पा महाराज ने उन्हें आशीर्वाद दिया और कहा-''विचार-सागर ग्रंथ (वेदान्त) का अध्ययन करो। तुम्हारी सब मनोकामनाएँ पूर्ण हो जायेंगी। आगे कुछ वर्षो के पश्चात् जब किसी कार्यवश तुम्हारा उत्तर दिशा की ओर जाना होगा, तब वहाँ तुम्हारे पूर्व पुण्यों के फलस्वरूप एक माने हुए सद्गुरू से तुम्हारी भेट होगी और वे ही आगे तुम्हारा मार्ग-दर्शन करेंगे।''

कुछ समय पश्चात् ठाकुर का जुन्नर में तबादला हो गया। वहाँ जाते हुए मार्ग मे 'नाणेघाट' नामक पहाडी पार करने में उन्हें भारी कठिनाई अनुभव हुई। पहाड के बहुत ही तंग रस्तों में से भ्रमण करते हुए कहीं-कहीं उन्हें भैंसे की भी सवारी करनी पडी। जुन्नर में कुछ वर्ष बिताने के बाद ठाकुर कल्याण आये। वहाँ चाँदोरकरजी से भेट होने पर उन्हें श्री साई महाराज के सम्बन्ध में जानकारी हुई और श्री बाबा के दर्शनों के लिए ठाकुर शिरडी पहूँचे। श्री बाबा के दर्शन मात्र से ठाकुर बहुत ही प्रसन्न हुए और भक्ति-भाव से हाथ जोडकर उन्होंने श्री बाबा से आशीर्वाद माँगा। अन्तर्ज्ञान से सब कुछ जानकर उनकी ओर देखते हुए श्री साई बोले-''हमारा मार्ग कानडी अप्पा के बताये हुए मार्ग की भाँति सुगम नही है। भैंसे के पीठ पर सवार होकर दुर्गम पहाडियाँ पार करने की अपेक्षा हमारा मार्ग अधिक कठिण है। इस अध्यात्मिक मार्ग मे तुम्हे पंचप्राण भी बलिदान करने होंगे।'' श्री बाबा के यह उद्गार सुनकर ठाकुर का पूर्ण समाधान हुआ और उन्होंने श्री बाबा के चरणों में मस्तक झुका दिया। ठाकुर का समाधान करने के लिए श्री साई पुन: बोले-''अरे, तुम्हारे अप्पा ने जो मार्ग बतलाया है, वही मार्ग आरम्भ में ठीक है। केवल ग्रंथो का पारायण करने से कुछ लाभ नही होता। परंतु उन्हें निर्दिष्ट तत्त्वों का मनन कर उन्हें प्रत्यक्ष

आचरण में लाने का सदैव प्रयत्न होना चाहिए। गुरू-कृपा से भक्त को आध्यात्मिक उन्नति की यह अगली अवस्था प्राप्त होती है।'' कानडी अप्पा ने जो कार्य अधूरा छोड दिया था, उसे श्री साई महाराज ने आगे पूर्ण किया।

पूना के श्री अनन्तराव पाटणकर ने एक बार श्री बाबा से कहा-''बाबा मैंने वेद-वेदांग, उपनिषदों तथा सभी पुराणों का गूढ अध्ययन किया; परंतु फिर भी मेरे मन को शान्ति न मिली। कृपा कर मुझे मार्ग दिखाइये।'' श्री बाबा ने एक सौदागर की कहानी सुना कर नवधा[1]-भक्ति का सत्य स्वरूप पूर्णतया समझा दिया।

यहाँ बम्बई के प्रसिद्ध पितले परिवार के श्री हरिश्चन्द्र पितले के प्रत्यक्ष अनुभव का उल्लेख करना अप्रासंगिक सिद्ध नहीं होगा। उनका ज्येष्ठ पुत्र द्वारकानाथ बचपन से ही मिर्गी के रोग से पीडित था। बम्बई के सुप्रसिद्ध डॉक्टर-वैद्यो से निराश हो पितले ने गुरू-कृपा का मार्ग अंगीकार किया। बम्बई में माधवबाग में दासगणूजी का कीर्तन सुनने हरिश्चचन्द्र भी गये थे और वहाँ श्री साई का व्याख्यान सुनकर उन्हें शिरडी जाने की प्रबल इच्छा हुई। अपनी पत्नी और पुत्र के साथ वे श्री बाबा के दर्शनार्थ शिरडी पहूँचे। श्री बाबा कि पूजा अर्चना के पश्चात उन्होंने अपने रोग-ग्रस्त पुत्र को श्री बाबा के चरणों में डालदिया। चमत्कार यह हुआ की रोग ने एकाएक उग्र रूप धारण किया। लडके की आँखे बाहर निकल आई। मुँह से झाग निकलने आरम्भ हुए और थोडी ही देर बाद लडका मूर्च्छित हो गया। बडी आशा से श्री बाबा के दर्शन के लिए आते ही यह शोकजनक घटना देखकर हरिश्चन्द्र और उनकी पत्नी किंकर्त्यव्यविमूढ हो गए। उनकी पत्नी ने तो दु:खावेश मे रोना आरम्भ किया

---

१ नवधा-भक्ति - सन्त समागम, कथा-प्रेम, गुरू-सेवा, भगवद्-गुणगान, मन्त्र-जाप, विरति, सब में आत्मभाव, सन्तोष और परदोष न देखना एवं भगवान् का भरोसा और सबसे छलहीन रहना।

और अनन्य भाव से श्री बाबा को पुकारा। श्री बाबा का दयाशील अन्त:करण द्रवित हो गया। हरिश्चन्द्र की पत्नी का समाधान करते हुए श्री बाबा बोले- ''माँ, दु:ख न करो! इस बच्चे को अपने निवास-स्थान पर ले जाओ और 'थोडी देर प्रतीक्षा करो। केवल आधे घण्टे के अन्दर यह चैतन्य हो जायेगा।'

श्री बाबा की आज्ञानुसार तुरन्त ही लडके को घर पहूँचाया गया और सचमूच ही आधे घण्टे के भीतर लडके ने चैतन्यावस्था प्राप्त की। पितले कुटुम्ब के सभी लोगों को अपार प्रसन्नता हुई। श्री बाबा की असम्भव सभी लोगोंमे मिठाई बाँटी गई। स्वयं पितले अपनी पत्नीके साथ द्वारकामाई पहूँचे और श्री बाबा के सेवामें रत हुए। कुछ समय शिरडी में श्री बाबा की सेवा-चाकरी करने के उपरान्त पितले और उनके सम्बन्धी बम्बई लौट आये। श्रीमती पितले पर बाबा की विशेष कृपा रही। वह साध्वी स्त्री अत्यन्त सीधी-सादी, स्नेहमयी और सात्विक वृत्ति की थी। श्री बाबा की अनुमति प्राप्त करने के लिए जब श्रीमती पितले द्वारकामाई में गई तो श्री बाबा ने स्वयं अपने हाथों आशीर्वाद के साथ ऊदी दी और पितले की ओर देखते हुए बोले- ''बापू, दो रूपये तो मैने तुम्हे पहल ही दिये है। उनके साथ ये तीन रूपये और देता हूँ। अपने घर अन्य देवी-देवताओं की मूर्तिओं के साथ इन्हें रखो और प्रतिदिन इनकी पूजा करो। तुम्हारा सदैव कल्याण होगा।''

श्री साई का आशीर्वाद प्राप्त कर पितले बम्बई लौटे। श्री बाबा के शब्द उनके कानों में गूँज रहे थे। वह इस विचार में दिन-रात डूबे रहे, कि जब वे पहिले कभी श्री बाबा के दर्शन के लिए नही गए तो ''दो रूपये तो मैंने पहिले ही दिये है?'' श्री बाबा के इन शब्दों का अर्थ क्या हो सकता है? मुझे श्री बाबा ने रूपये कब दिये? इस प्रश्न ने उन्हें असमंजस में डाल दिया। अन्त में वे अपने वृद्धा माता के पास पहूँचे और शिरडी का सारा वृत्तान्त सुनाकर उनसे दो रूपयों के सम्बन्ध में प्रश्न किया। कुछ देर विचार करने के पश्चात् पितले की वृद्ध माता ने कहा-''बेटे, अब मै समझ गई। जब तुम बच्चे थे तो इसी प्रकार तुम्हारे पिता सब को साथ ले अक्कलकोट महाराज के दर्शनो के

लिए गये थे। उस समय प्रसाद को स्वरूप स्वामीजी ने तुम्हारे पिता को दो रूपये दिये थे और वे पूजा के लिए अबतक रखे हुए थे। तुम्हारे पिता भक्तिभाव से उन रूपयों की नित्य पूजा करते थे। परंतु उनके पश्चात् तुम्हें उन रूपयों का विस्मरण हो गया और वे रूपये न जाने कहाँ गये। श्री साई महाराज ने तुम्हे उचित पाठ सीखना चाहिये और अपने कुल में परंपरासे चली आई सभी पूजा-विधि उचित रूप से चालू रखनी चाहिये।''

पितले अपनी माता के विचारों से पूर्णतया सहमत हुए और श्री बाबा के दो रूपयों का अर्थ भी ज्ञात हो गया। श्री साई की इस अद्‌भूत लीला से उनके मन पर गहरा प्रभाव पडा और दिन से उन्होंने अपने मन को भक्ति-मार्ग की ओर प्रवृत्त किया।

श्री सद्‌गुरू साई महाराज दत्तात्रेय के अवतार कहे जाते है। अक्कलकोट महाराज के पश्चात् यह श्री साई का अवतार है। ऐसी कुछ भक्तों की श्रद्धायुक्त भावना है। उपरोक्त घटना से भक्त की इस कल्पना की बहुत अंशो तक पुष्टि होती है। श्री साई महाराज को अपने अन्तर्ज्ञान द्वारा अपने पिछले अवतार में पितले के पिता को दो रूपये देने का जब स्मरण हुआ, तभी तो उन्होंने उन दो रूपयों के सम्बन्ध में अपने मुख से वे उद्‌गार निकाले।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋